ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL**04292**
RNI REG. NO. UPBIL/**2014/66218** **PP. No.- 191-192**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

भारतीय समाज में विवाह एवं परिवार की भूमिका

डॉ0 सविता राजन

असिस्टेन्ट प्रोफेसर– समाजशास्त्र, इंदिरा गांधी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बांगरमऊ, उन्नाव (उ0प्र0) भारत

Received-10.07.2026, Revised-18.07.2026, Accepted-25.08.2026, **E-mail:savitarajanlko@gmail.com**

सारांशः हिन्दू धर्म भारत का एक प्राचीन धर्म है। हिन्दू धर्म में लौकिक जीवन की अपेक्षा पारलौकिक जीवन को अधिक महत्व प्रदान किया गया है। 'शत जीवेत सुखं जीवेत्' 'जीवेम् शरदः शतम्' संकल्पात्मक तथा आशीर्वादात्मक पंक्तियां व्यक्ति के जीवन में 100 वर्ष की आयु होने की पुष्टि करती है। प्रत्येक आश्रम के लिये 25 वर्ष निर्धारित किये गये हैं। हिन्दू धर्म में चार पुरूषार्थ बताये गये हैं धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष; विवाह के उपरांत व्यक्ति परिवार का निर्माण करता है। धार्मिक क्रियाओं के लिये पति के लिये पत्नी का साहचर्य आवश्यक है, दोनों धार्मिक क्रियाओं को एक साथ मिलकर सम्पन्न करते हैं। परिवार की बढ़ोत्तरी के लिये काम तथा परिवार निर्माण के बाद आर्थिक क्रियायें की जाती है। प्रत्येक परिवार का अपना परम्परागत व्यवसाय होता है जिसके माध्यम वे धन का अर्जन करते है। जब व्यक्ति अपनी उम्र सम्पूर्ण कर लेता है मृत्यु उपरांत उसे मोक्ष अपनी संतान द्वारा तर्पण व पिण्डदान से ही प्राप्त होता है। जन्म–मरण ये चक्र चलता रहा है। इस प्रकार हिन्दू धर्म में विवाह एवं परिवार आधारभूत संस्थायें है।

कुंजीभूत शब्द– पारलौकिक, ऋणमुक्ति, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम, अविच्छेद्य, ऋग्वेद, मोक्ष, ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्रजापत्य, लौकिक, दीर्घायु।

हिन्दू धर्म में लौकिक जीवन की अपेक्षा पारलौकिक जीवन को अधिक महत्व प्रदान करते हैं। पृथ्वी पर दीर्घायु प्राप्त करने की कामना की जाती रही है। ऋग्वेद काल से ही 'शते जीवेम्'[1] अर्थात् सौ वर्ष के जीवन की कामना की जाती रही है। ब्राह्मण काल में पारलौकिक अमरत्व को जीवन का सार ध्येय माना गया है। मानव जीवन का उद्देश्य अमरता ही प्राप्त करना नहीं है। अपितु शतवर्षीय पूर्णायु प्राप्त करना भी है। इन 100 वर्ष की आयु के आधार पर आश्रमों की व्यवस्था की गई है। सौ वर्ष की आयु को चार बराबर भागों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक आश्रम के लिये 100/4 के हिसाब से 25 वर्ष की अवधि निर्धारित की गई है। जन्म से प्रारंभिक 25 वर्ष ब्रह्मचर्य आश्रम, 25 वर्ष गृहस्थ आश्रम, 25 वर्ष वानप्रस्थ तथा अंत के 25 वर्ष सन्यास आश्रम के माने गये हैं।[2] ब्रह्मचर्य आश्रम ज्ञानार्जन हेतु, गृहस्थाश्रम जीविकोपार्जन, सन्तानोत्पत्ति तथा पंच महायज्ञों के नियमित अनुष्ठान से ऋणमुक्ति हेतु वानप्रस्थाश्रम तपस्या कर्म हेतु तथा सन्याश्रम मोक्ष प्राप्ति के साधनभूत योगसाधना हेतु निर्धारित किया गया। आश्रम व्यवस्था के इस क्रम की पुष्टि इस श्लोक के माध्यम से होती है।

आद्ये वयसि नाधितं, द्वितीय नार्जितं धनम्
तृतीय न तपस्तप्तं, चतुर्थे किं करिष्यति।।[3]

धर्म, अर्थ एवं काम की प्राप्ति गृहस्थाश्रम में होती है। ऋण से उऋण होने के लिये पुत्रोत्पत्ति का विधान है। गृहस्थ में प्रवेश करके काम सुख की प्राप्ति तथा गृहस्थी को चलाने के लिये जीविकोपार्जन द्वारा अर्थ की प्राप्ति भी गृहस्थाश्रम में होती है। उपनिषदों महाभारत तथा स्मृतियों में इस विषय पर किसी प्रकार का मतभेद नहीं है। गृहस्थाश्रम के बिना मोक्ष की प्राप्ति संभव नहीं है। इस संबंध में महाभारत के उद्धरण सबसे अत्यधिक श्रेष्ठ और पवित्र है और इसी के द्वारा जीवन के उद्देश्य की वास्तविक पूर्ति सम्भव है। इस गृहस्थाश्रम का महत्व सर्वोपरि है। गृहस्थाश्रम में व्यक्ति परिवार का निर्माण करता है जिसका आधार विवाह संस्था है। हिन्दू धर्म में विवाह तथा परिवार का महत्वपूर्ण स्थान है। धर्म, अर्थ, काम–मोक्ष, भारतीय दर्शन में पुरूषार्थ बताये गये हैं, धर्म, काम, विवाह संस्था की विशेषता है जबकि अर्थ एवं मोक्ष परिवार की विशेषता को दर्शाता है।

उद्धाहरण– तेन भार्यत्व सम्पादकं ग्रहण विवाह। – मनुस्मृति 3/20[4]

उद्वह अर्थात् वधू को वर के घर ले जाना विवाह दो विषम लिंगियों के बीच पाये जाने वाले यौन सम्बन्धों को सामाजिक एवं वैधानिक स्वीकृति के रूप में प्रकट करती है। हिन्दू विवाह एक संस्कार है।[5]

एक हिन्दू अपने जीवन में विभिन्न संस्कारों को सम्पन्न करता हुआ आगे बढ़ता है और अपने व्यक्तित्व को पूर्णता प्रदान करता है प्रत्येक हिन्दू से प्रतिदिन पंच महायज्ञ करते रहने की अपेक्षा की गई है और इन यज्ञों को पति–पत्नी के सहयोग से पूरा करने की बात कही गयी है। हिन्दुओं के लिये विवाह एक आवश्यक संस्कार एवं कर्त्तव्य माना गया है।

विवाह प्राथमिक रूप से कर्त्तव्यों की पूर्ति के लिये होता है इसलिये विवाह का मौलिक उद्देश्य धर्म था। हिन्दू विवाह स्त्री–पुरूष का पति–पत्नी के रूप में एक आलौकिक अविच्छेद्य एवं शाश्वत मिलन है तथा इस पवित्र बंधन को तोड़ना अधार्मिक है। हिन्दू विवाह के उद्देश्य धर्म, प्रजा (सन्तान) तथा रति (आनन्द) बताये गये हैं। विवाह कर्त्तव्यों की पूर्ति के लिये होने का कारण इसका मूल उद्देश्य धर्म ही था। पंच महायज्ञ में अपनी पत्नी के साथ नित्य आहूति प्रदान की जाती थी। इन उत्तरदायित्वों की समाप्ति गृहस्वामी की मृत्यु पर ही समाप्त होती थी। कुछ ऐसे कृत्य होते थे जिनका सम्पादित किया जाना विवाह की पूर्णता के लिये आवश्यक है, होम पाणिग्रहण एवं सप्तसदी। इस प्रकार धर्म की प्राप्ति के लिये विवाह संस्कार को महत्वपूर्ण स्थान तथा हिन्दू विवाह में धर्म को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। जबकि प्रजा और रति को कम महत्वपूर्ण स्थान दिया।[6] ऋग्वेदिक काल में संस्थागत स्वरूप ग्रहण करने से पूर्व भी विवाह संस्कार की स्वीकार्यता समाज में थी। हिन्दू धर्म में आठ प्रकार के विवाह बताये गये हैः ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्रजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस, पैशाच। इन विवाहों में प्रारंभ के चार अत्यंत पवित्र माने जाते हैं। जबकि शेष चारों को निन्दित माना जाता है।

1. **ब्राह्म विवाह–** मनु ने ब्रह्म विवाह को परिभाषित करते हुये लिखा है– वेदों के ज्ञाता शीलवान वर को बुलाकर वस्त्र एवं आभूषण से सुसज्जित कर पूजा एवं धार्मिक विधि से कन्यादान करना ही ब्रह्म विवाह है।[7]
2. **दैव विवाह–** गौतम एवं याज्ञवल्क्य ने दैव विवाह के लक्षण का उल्लेख किया। सद् कर्म में लगे पुरोहित को जब वस्त्र आभूषणों से सुसज्जित कन्या दी जाती है तो उसे दैव विवाह कहते है।[8]
3. **आर्ष विवाह–** इच्छुक वर कन्या के पिता को एक गाय और एक बैल अथवा इनके दो जोड़े प्रदान करके विवाह करता है।[9]
4. **प्रजापत्य विवाह–** इसमें लड़की का पिता आदेश देते हुये कहता है कि तुम दोनों एक साथ रहकर आजीवन धर्म का आचरण करो।[10]
5. **असुर विवाह–** अधिक धन देकर कन्या को ग्रहण करना असुर विवाह कहलाता है।[11]

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

6. **गान्धर्व विवाह–** प्रेम के फलस्वरूप किया जाने वाला विवाह गान्धर्व विवाह कहलाता है।[12]
7. **राक्षस विवाह–** कन्या की बलपूर्वक हरण करके लाना, उससे विवाह करना राक्षस विवाह कहलाता है।[13]
8. **पैशाच विवाह–** सोयी हुई, उन्मुक्त, मंदिरा पान की हुई, अथवा राह में जाती हुई, लड़की के साथ बलपूर्वक कुकृत्य करने के उपरांत किया जाने वाला विवाह पैशाच विवाह कहलाता है।[14]

मनु ने गृहस्थ धर्म की आधारभित्ति माने जाने वाले आठ प्रकार के विवाहों का निरूपण किया। समाज को आगे बढ़ाने के लिये सन्तानोत्पत्ति आवश्यक है। सन्तानोत्पत्ति के माध्यम से परिवार में बढ़ोत्तरी होती है। विवाह के बाद उत्पन्न सन्तानों को समाज में वैधता प्राप्त होती है।

मैलिनोवस्की के अनुसार, परिवार ही ऐसा समूह है जिसे मनुष्य पशु अवस्था से अपने साथ लाया है।[15]

मैकाइबर एवं पेज के अनुसार, परिवार पर्याप्त निश्चित यौन संबंध द्वारा परिभाषित एक ऐसा समूह है, जो बच्चों के जनन एवं लालन–पालन की व्यवस्था करता है।[16]

डब्लू एल0 वार्नर के अनुसार, परिवार के दो स्वरूप हैं। (1) जन्ममूलक परिवार (2) प्रजनन मूलक परिवार।

जन्ममूलक परिवार वह परिवार होता है जिसमें वह जन्म लेता है, जबकि प्रजनन मूलक परिवार का निर्माण वह विवाह के बाद स्वयं करता है इसमें पुरूष उसकी पत्नी एवं अविवाहित बच्चे होते हैं।

इरावती कर्वे भारत में परिवार का अर्थ संयुक्त परिवार से ही है।[17] भारतीय धर्म, दर्शन, अर्थ व्यवस्था, जाति प्रथा, वर्ण एवं आश्रम व्यवस्था यहां के सामाजिक जीवन के महत्वपूर्ण अंग है। इन सभी में परिवार एक महत्वपूर्ण संस्था है। यह हिन्दू संस्कृति का संचालक सूत्र रहा है। हिन्दूओं में विवाह एवं परिवार को धर्म का अंग माना गया है। गृहस्थ आश्रम सभी आश्रमों का मूल कहा गया है। वैदिक काल से लेकर अब तक भारत में संयुक्त परिवार प्रणाली रही। भारत में अंग्रेजों के आगमन के बाद औद्योगीकरण, नगरीकरण के फलस्वरूप एकाकी परिवारों में बढ़ोत्तरी हुई है। किन्तु आज भी संयुक्त परिवारों का महत्व बना हुआ है। परिवार में समाजीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप ही बच्चा एक सामाजिक प्राणी बनता है। प्रत्येक परिवार के देवी, देवता व गुरू होते हैं। सभी सदस्यों का उनमें अगाध विश्वास होता है। पूजा–उपासना के माध्यम से अध्यात्म में बढ़ोत्तरी होती है। धार्मिक अनुष्ठानों की पूर्ति तथा त्योहारों व धार्मिक उत्सवों को मनाने हेतु सभी सदस्यों का सम्मिलन होता है। परिवार में सद्गुण, सेवा, बलिदान, प्रेम, सहयोग, परोपकार आदि भावनायें बच्चा परिवार में ही सीखता है। हिन्दू धर्म में विद्यमान प्रथायें, परम्परायें, रूढ़ियों, रीति रिवाज के अनुसार ही बच्चा आचरण करना सीखता है जिससे संस्कृति की रक्षा होती है और संस्कृति पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित की जाती है। घर के मुखिया द्वारा परिवार में अनुशासन एवं नियंत्रण बना रहता है जिससे परिवार के सदस्यों के स्वच्छन्द आचरण पर रोक लगती है। विकट परिस्थिति में जब युवा सदस्य अपना धैर्य खो बैठते है, तनाव व आत्महत्या की ओर अग्रसरित होते हैं तब अनुभवी सदस्य ही उनके पथ प्रदर्शक के रूप में कार्य करते हैं। संकटकालीन परिस्थितियों में परिवार के सदस्यों की देख–रेख व भरण पोषण का कार्य करना संयुक्त परिवार का नैतिक दायित्व है।

निष्कर्ष– ऋग्वेद काल से व्यक्ति के जीवन को 100 वर्ष में बांटा है। जिसमें विवाह के उपरांत ही व्यक्ति गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है। विवाह संस्था के माध्यम से व्यक्ति पुरूषार्थ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति परिवार के निर्माण में ही करता है। सन्तानोत्पत्ति के लिये विवाह आवश्यक है। बच्चों को समाज में वैधता माता–पिता के विवाह के बाद ही मिलती है। हिन्दू धर्म में विवाह के आठ स्वरूपों को मान्यता दी गई है जिनका महत्व आज भी बना है। हिन्दू विवाह के उद्देश्य धर्म, प्रजा इति बताये गये हैं। धर्म के आचरण के लिये पांच महायज्ञ पत्नी के साथ पूरे करने होते हैं। विवाह के फलस्वरूप ही परिवार बनता है जिसमें धार्मिक कार्य किये जाते है। भरण–पोषण के लिये परिवार कोई न कोई आर्थिक क्रिया अवश्य करता है। परिवार को आगे बढ़ाने के लिये सन्तानोत्पत्ति की प्रक्रिया होती है। संस्कृति की रक्षा पीढ़ी दर पीढ़ी परिवार के ही माध्यम से होती है। हिन्दू धर्म का अंतिम पुरूषार्थ मोक्ष है जिसे व्यक्ति मृत्यु के बाद पुत्र द्वारा किये गये पिण्डदान तथा तर्पण आदि क्रियाओं के माध्यम से करता है। इस प्रकार भारतीय ज्ञान परम्परा में विवाह एवं परिवार समाज को बनाने में आधारभूत एवं महत्वपूर्ण इकाई है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. चार्वाक दर्शन– वार्हिस्पत्य सूत्र।
2. गुप्ता, एम0 एल0, शर्मा समाजशास्त्र साहित्य भवन पब्लिकेशन, 2008 पृ0 सं0–204–205.
3. प्रो0 वाइ0 एस0 रमेश, भारतीय संस्कृति हंसा प्रकाशन, जयपुर 2007.
4. मनुस्मृति 3/20
5. कापड़िया के0 एम0, भारत वर्ष में विवाह एवं परिवार, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, पृष्ठ 173–175.
6. गुप्ता, एम0एल0 शर्मा, समाजशास्त्र साहित्य भवन पब्लिकेशन, 2008 पृ0 सं0–205–210.
7. मनुस्मृति 3/27.
8. मनुस्मृति 3/28.
9. मनुस्मृति 3/29.
10. मनुस्मृति 3/30.
11. मनुस्मृति 3/31.
12. मनुस्मृति 3/32.
13. मनुस्मृति 3/33.
14. वाचस्पत्यम् भाग 6,पृष्ठ 4424, शब्दकल्पद्रुमं भाग–3, पृष्ठ 238, संस्कृत– हिन्दीकोष पृष्ठ–635, संस्कृत आंग्ल शब्दकोश पृ0–348.
15. Malinowaski, Sex and repression in savage society.
16. Maciver and page, society P. 143.
17. Dr. Karve Irawati, Kinship organization in India P. 10.

*****